Indian Council of World Affairs
Sapru House, Barakhamba Road
New Delhi

संक्षिप्त प्रतिवेदन

राजनीति शास्त्र

अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल

एवं

विश्व मामलों की भारतीय परिषद्, नई दिल्ली

एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी

"भारत की विदेश नीतिः समसामयिक चुनौतियाँ एवं समाधान"

दिनांक 28 जुलाई, 2015

अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल एवं विश्व मामलों की भारतीय परिषद्, नई दिल्ली द्वारा आयोजित एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी दिनांक 28 जुलाई, 2015 को विश्वविद्यालय के पतांजलि सभागार में आयोजित की गई। संगोष्ठी का उद्घाटन प्रातः 11 बजे भारत के पूर्व राष्ट्रपति माननीय डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम जी को श्रद्धांजलि व्यक्त करने के आधा घंटे बाद किया गया। उद्घाटन सत्र में संगोष्ठी की रूपरेखा पर प्रकाश डालते हुए **डॉ. पवन कुमार शर्मा,** आचार्य एवं अध्यक्ष राजनीति शास्त्र एवं लोक प्रशासन विभाग, जो कि संगोष्ठी के संयोजक भी थे, ने बताया कि भारत की विदेश नीति का निर्धारण स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान कांग्रेस के राष्ट्रीय नेताओं ने कांग्रेस के अंदर ही 1932 में विदेश विभाग की स्थापना करने के उपरांत ही प्रारंभ कर दिया था। इस विभाग के अध्यक्ष पंडित नेहरू तथा सचिव डॉ. राममनोहर लोहिया बनाए गए थे। दोनों ही महानुभावों की शिक्षा-दीक्षा विदेशों में संपन्न हुई थी। नेहरू जी की संपूर्ण शिक्षा पर ब्रिटिश शिक्षा एवं विचार परंपरा का प्रभाव था, वहीं डॉ. लोहिया की प्राथमिक शिक्षा उनके पिता के साथ गांवों एवं भारतीय शहरों में संपन्न हुई। उच्च शिक्षा के लिए वे विदेश गए। वैचारिक दृष्टिकोण से दोनों पर ही समाजवाद का अद्भुत प्रभाव था। नेहरू जी जहां यूरोपियन समाजवाद से अनुप्राणित थे, वहीं डॉ. लोहिया समाजवाद के भारतीयकरण से प्रेरणा लेते थे, जिसमें समाज की भूमिका महत्वपूर्ण थी, न कि राज्य की। इसलिए 1932 में स्थापित इस विभाग के अंतर्गत विदेश नीति का प्रारूप जो तैयार किया गया, वह यूरोपियन परंपरा से ज्यादा प्रभावित था। बाद में लोहिया जी इस विभाग से अलग हो गए और नेहरू जी के नेतृत्व में भारत की विदेश नीति विकसित हुई। विदेश नीति के अनेक तत्वों में से एक तत्व राष्ट्रहित की कीमत विश्वबंधुता के सिद्धांत पर सुनिश्चित की गई। इसलिए भारत की विदेश नीति भारत के हित के अनुरूप परिणामकारी सिद्ध नहीं हुई। इसलिए अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल के राजनीति शास्त्र विभाग एवं विश्व मामलों की भारतीय परिषद्, नई दिल्ली ने अंतरराष्ट्रीय राजनीति के दृष्टिकोण से जागरूक विद्यार्थी एवं अध्येताओं के सम्मुख विदेश नीति का भारतीय परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत करने का निश्चय किया। यह

संगोष्ठी उसी का परिणाम है। आज बहुत अफसोस का दिन है कि हमारे मध्य 21वीं सदी के महान दृष्टा डॉ. कलाम नहीं रहे। उनके द्वारा लिखित लोकप्रिय पुस्तक 21वीं सदी का भारत का, यदि हम अध्ययन करते हैं तो उसमें भी हम यह पाते हैं कि भारत को सशक्त बनाने के लिए भारत के मूल तत्वों को समाविष्ट किया जाना आवश्यक है। डॉ. शर्मा ने अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय की भूमिका पर भी प्रकाश डालते हुए बताया कि इस विश्वविद्यालय का मूल हेतु हिंदी माध्यम से ही समस्त विषयों का अध्ययन एवं अध्यापन करना एवं कराना है। यह भी अजब संयोग है कि विश्व मामलों की भारतीय परिषद् भी हिंदी के उन्नयन के लिए कटिबद्ध है।

कार्यक्रम में विशिष्ट वक्ता के रूप में विश्व मामलों की भारतीय परिषद् के अनुसंधान अधिकारी **डॉ. राकेश कुमार मीणा** ने परिषद् के इतिहास, कार्य और लक्ष्यों के बारे में विस्तार से वर्णन किया। विश्व मामलों की भारतीय परिषद् को एक थिंक टैंक के रूप में भारतीय बुद्धिजीवियों के एक समूह द्वारा 1943 में स्थापित किया गया था। यह सोसायटी अधिनियम 1860 के पंजीकरण के अंतर्गत एक गैर सरकारी, गैर राजनीतिक और गैर लाभकारी संगठन के रूप में पंजीकृत की गई। 2001 में संसद के एक अधिनियम द्वारा, विश्व मामलों की भारतीय परिषद्, को राष्ट्रीय महत्व की संस्था घोषित की गई। भारत के उपराष्ट्रपति आईसीडब्ल्यूए के पदेन अध्यक्ष हैं। परिषद् के मुख्य लक्ष्य हैं-अन्य देशों के साथ भारत के संबंधों को बढ़ावा देने के लिए अध्ययन, अनुसंधान, विचार-विमर्श, व्याख्यान तथा विचार विनिमय आदि करना इसके अतिरिक्त सम्मेलनों और अंतरराष्ट्रीय मामलों के प्रति भारतीय नीति पर चर्चा करने और अध्ययन करने के लिए सेमिनारों की व्यवस्था करना। उन्होंने विदेश नीति पर हिंदी में विचार-विमर्श करने के विदेश मंत्रालय के कदम की महत्ता को स्पष्ट किया। विदेश नीति पर हिंदी में वाद-विवाद, शोध, लेख, पुस्तक, सेमिनार आदि को परिषद् द्वारा प्रोत्साहित करने की बात कही। इस प्रयास के लिए परिषद् ने निम्न कदम उठाये हैं- (अ) अनुसंधान अध्येताओं द्वारा लिखित सभी मुद्दों के सार, नीतियों के सार और दृष्टिकोणों का हिंदी में अनुवाद और

आईसीडब्ल्यूए की वेबसाइट पर उनका प्रकाशन। (ब) अंतरराष्ट्रीय मामलों में भारत की भूमिका के बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए योजना (स) हिंदी और अन्य भाषाओं में मूल प्रबंध/मोनोग्राफ पर योजना (द) आईसीडब्ल्यूए प्रकाशनों का हिंदी में अनुवाद और उनका प्रकाशन।

उद्घाटन सत्र में बीज वक्ता के रूप में **प्रो. मधुरेन्द्र कुमार** (कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल) ने 'भारतीय विदेश नीति का विकासक्रम' विषय पर व्याख्यान देते हुए कहा कि नेहरू काल से ही भारत की विदेश नीति की जड़े भारत की सभ्यता और परंपराओं में, भारत के स्वतंत्रता संग्राम, इसकी भौगोलिक स्थिति में और शांति, सुरक्षा, विकास तथा इस जगत में एक स्थान के लिए भारत की तलाश में स्थित थी। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद स्वाधीन भारत की विदेश नीति के मुख्य आधार शांति, निःशस्त्रीकरण, गुटनिरपेक्षता, साम्राज्यवाद तथा उपनिवेशवाद का विरोध, अफ्रीका-एशियाई आदि रहे। उन्होंने कहा कि विदेश नीति घरेलू नीति का ही व्यापक रूप होता है। वर्तमान विदेश नीति को समझने के लिए हमें शीत युद्ध को संज्ञान में लेना आवश्यक है, जिसमें विश्व दो खेमों में बंट गया था- अमेरिका और सोवियत संघ, जिसके तहत भारत ने आत्मनिर्णय का रूख अपनाते हुए गुट निरपेक्षता का मार्ग अपनाया। उदारीकरण के बाद हम अंतरनिर्भरता के युग में रह रहे हैं अतः विदेश नीति के अन्य घटकों का भी सहयोग लेना पड़ेगा। विदेश नीति का मुख्य उद्देश्य राष्ट्रीय शक्ति का संवर्धन करना होता है, अतः हमें सैन्य शक्ति ही नहीं वरन् आर्थिक, सांस्कृतिक और बौद्धिक शक्ति को भी बढ़ाना होगा। विदेश नीति में नए आयाम भी जुड़े हैं जैसे, सामरिक के साथ-साथ आर्थिक संबंधों को भी बढ़ावा देना चाहिए। इस संदर्भ में एक महत्वपूर्ण बात यह है कि विदेश नीति एवं राष्ट्रीय हितों के बीच एक गहन संबंध होता है। राष्ट्रहित विभिन्न संदर्भो में विदेश नीति के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं-प्रथम, ये विदेश नीति को अंतरराष्ट्रीय वातावरण के अनुसार सामान्य अभिमुखीकरण प्रदान करते हैं। द्वितीय, ये निकट भविष्य की स्थिति में विदेश नीति

को संचालित करने वाले मापकों का विकल्प प्रदान करते हैं। तृतीय, राष्ट्रीय हित विदेश नीति को निरंतरता प्रदान करते हैं। चतुर्थ, इन्हीं के आधार पर विदेश नीति बदलते हुए अंतरराष्ट्रीय स्वरूप में अपने आपको ढालने में सक्षम हो सकती है। पंचम, राष्ट्रीय हित विदेश नीति को मजबूत आधार प्रदान करते हैं क्योकि ये समाज के समन्वित एवं सर्वसम्मति पर आधारित मूल्यों की अभिव्यक्ति होते हैं। अंततः ये विदेशी नीति हेतु दिशा निर्देशन का कार्य करते हैं। आतंकवाद के खिलाफ भारत की लड़ाई शुरू से रही और वर्ष 2001 में अमेरिका पर आतंकी हमले के बाद वह भी इस अभियान में भारत से जुड़ा। इसके बाद भारत और अमेरिका के मध्य हुए परमाणु करार ने भी दोनों देशों के संबंधों में प्रगाढ़ता लाई। अटल बिहारी वाजपेयी जी के दौर में विदेश नीति में आधारभूत परिवर्तन आये। वर्तमान में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में विदेश नीति में नई शक्ति का संचार हुआ है और एक लंबे समय के बाद विदेश नीति पटल पर करिश्माई नेतृत्व का प्रादुर्भाव हुआ है। विदेश नीति अब तक बड़े शहरों में एक वर्ग विशेष के मध्य ही चर्चा का विषय रहता था, लेकिन अभी लगता है कि इस तक आम जनता की पहुँच भी बढ़ रही है। हमारी सांस्कृतिक और दार्शनिक जो परंपरा है, विदेश नीति के व्यवहार पर उसका कितना प्रभाव है, उसमें हमारी सांस्कृतिक और दार्शनिक परंपरा कितनी प्रभावित करती है, विदेश नीति और रक्षा नीति में जो विमर्श चल रहा है, उसमें सांस्कृतिक रणनीति का क्या स्थान है, इस पर विचार करना चाहिए। सांस्कृतिक राजनय में हम मूलतः तीन तत्वों को शामिल करते हैं जिसमें हम पूरे विश्व को अपनी दृष्टि से कहां नहीं ले जा सकते हैं। प्रो. मधुरेन्द्र कुमार ने कहा कि आजादी के समय अमेरिका और रूस में से एक शक्ति केंद्र में से किसी एक को चुनने का विकल्प था। इस दौरान परिस्थिती ऐसी थी कि इन दो महाशक्तियों के हम पिछलग्गू हो जाये या स्वतंत्र रूप से अपनी विदेश नीति तय करें। लेकिन हम बुद्ध के पंचशील को आधार बनाकर गुट निरपेक्षता की राह पर चल पड़े। लंबे समय तक हमारी विदेश नीति इसी आधार पर संचालित होती रही। लेकिन अंतरराष्ट्रीय राजनीति में परिस्थितियां एक तरह की नहीं होती। इसीलिए प्रत्येक राष्ट्र बदली हुई परिस्थितियों में स्वयं को अभियोजित करने का

प्रयास करता है। भारत में सोवियत संघ के विघटन के बाद चुनौती थी। नई भू-आर्थिक परिस्थितियों के कारण हमारे सामने सीमा रहित संचार में वैश्विक चुनौती सामने आयी। उन्होंने कहा कि 15-20 वर्षों से चीन-पाकिस्तान में सीमा का अतिक्रमण करने की प्रवृत्ति बढ़ी है। लेकिन सशक्त रूप में भारतीय नेतृत्व ने उसका उत्तर दिया है। इसके साथ ही भारतीय विदेश नीति में पुर्नविचार करने की आवश्यकता पड़ी। अंतरराष्ट्रीय राजनीति में युद्ध अंतिम विकल्प होता है। राजनय के माध्यम से, कूटनीति के माध्यम से भारत ने पाकिस्तान के खिलाफ सफलता पायी है। विश्व जनमत हमारे साथ खड़ा है। पड़ोसी देशों के संदर्भ में हमारे पास बड़ी चुनौती है। पूर्व के नेतृत्व में विदेश नीति लकवाग्रस्त थी, स्पष्ट संदेश नहीं जाता था। उस समय भी भारत के प्रधानमंत्री थे, आज भी हैं। आज के प्रधानमंत्री के पीछे सवा सौ करोड़ लोगों का जनमत है, इसका सम्मान करने को दुनिया बाध्य है। विदेश नीति का मतलब केवल युद्ध और शांति नहीं है बल्कि इसमें अपने हितों और विरासत को आधार बनाना भी है। अधोसंरचना चाहिए, तकनीक चाहिए, प्रधानमंत्री के जो विदेश दौरे हुए हैं, उसी संदर्भ में देखा जाना चाहिए। प्रधानमंत्री के शपथ ग्रहण समारोह में पड़ोसी देशों के राजाध्यक्षों को आमंत्रित करना एक बड़ी कूटनीति सफलता है। हाल ही में एक महत्वपूर्ण पुस्तक प्रकाशित हुई ''मोदी वर्ल्ड''। इसमें भारतीय विदेश नीति का सामयिक मूल्यांकन किया गया है। भारत की विदेश नीति की तुलना फ्रांस की तीन चरणीय विदेश नीति से की गई है। भारत के संदर्भो में प्रथम गणतंत्रीय व्यवस्था का चरण नेहरू, दूसरी गणतंत्रीय व्यवस्था वाजपेयी और तीसरी गणतंत्रीय व्यवस्था मोदी के कार्यकाल को देखा जा रहा है। जिस तरह से फ्रांस में व्यक्तियों का प्रभाव था, उसी तरह भारत में भी दिखाई दे रहा है। वर्तमान दौर में हमारे सामने चुनौती पड़ोस की है, रक्षा तकनीक में आधुनिकता की है। 120 देशों में भारतीय मिशन है। भाषा विभाग विदेश नीति का महत्वपूर्ण आयाम है। वर्तमान नेतृत्व इसमें प्रयास कर रहा। भारत के प्रभावी राजनय का प्रस्थान बिंदु अटलजी का नेतृत्व पोखरन विस्फोट था। विशेष्णात्मक दृष्टि की जगह भारत की विदेश नीति को एतिहासिक दृष्टि से देखने की परंपरा अधिक रही है, जो कि

उपयुक्त नहीं है। इस प्रकार की गोष्ठियों से हम अनछुएं पहलुओं को उद्घाटित कर सकते हैं, जो विदेश नीति के उपलब्ध साहित्य में दिखाई नहीं देते। सांस्कृतिक पक्ष को हम अपनी विदेश नीति में प्रभावी ढंग से नहीं रख पाए। जबकि सांस्कृतिक संबंधों को प्रभावी ढंग से अपनी विदेश नीति का हिस्सा बनाना चाहिए था। भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने इस रिक्तता को भरा है। उन्होंने मेडिसन स्क्वेयर और कनाडा से सांस्कृतिक संदेश प्रभावी ढंग से दिया है। इससे भारत में नई ऊर्जा का संचार हुआ है। पहली बार पूरी दुनिया ने मानी कि व्यक्तित्व के कारक होने से कैसा संवाद स्थापित होता है।

सत्र की अध्यक्षता करते हुए प्रो. बी.के. शर्मा ने इस पहल को प्रेरणादायक माना। उन्होंने वक्ताओं द्वारा रखे गए विषयों को सामयिक मानते हुए उस पर जनचर्चा की आवश्यकता पर बल दिया तथा उन्होंने कहा कि यद्यपि भारत की स्वतंत्रता के बाद जो विदेश नीति प्रचलन में रही उसकी आलोचना की जाती है, लेकिन यह सही नहीं है। क्योंकि उस युग में भारत के लिए यह आवश्यकता थी कि वह महाशक्तियों के साथ संबंधों में स्थायित्व लाए, जिससे स्वतंत्रता के बाद की समस्याओं का भारत सामना कर सके। क्योंकि जिस अवस्था में भारत को स्वतंत्रता मिली थी, उस समय यह अनिवार्य था कि भारत सभी प्रकार से स्वालंबी हो सके। इसलिए भारत ने जहां एक ओर सोवियत यूनियन के साथ संबंध विकसित किए वहीं यूरोपीय और अमेरिकी देशों के साथ भी संबंधों को सुदृढ़ता प्रदान की। गुटनिरपेक्ष आंदोलन की नीव ने यह सिद्व कर दिया था कि भारत एशिया और यूरोप महादीप से बाहर निकलकर भी संबंधों को स्थापित करने में सक्षम है। इसलिए पुरानी विदेश नीति बेशक बहुत मामलों में असफल रही होगी, लेकिन बहुत सारे विषयों में यह देश के विकास की कसौटी में खरी उतरी है।

संगोष्ठी के प्रथम समग्र सत्र में डॉ. डी.पी. रोहित, प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, सरोजिनी नायडू शासकीय स्वशासी कन्या महाविद्यालय, भोपाल ने अपने विशिष्ट वक्तव्य में

विचारों के माध्यम से अवगत कराया कि भारत की विदेश नीति न केवल भारत के पड़ोसी देशों के साथ संबंधों को पुख्ता कर रही है बल्कि भारत के वाणिज्यिक हितों पर भी ध्यान देकर उन्हें देश की अर्थव्यस्था के दृष्टिकोण से सुदृढ़ आयाम प्रदान कर रही है। भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री श्री मोदी इस विषय में सोचने वाले पहले प्रधानमंत्री है जो न केवल भारत के पड़ोसी देशों के साथ संबंधों को मधुर बना रहे हैं बल्कि सुदुर देश अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया एवं यूरोप आदि के साथ भी वह भारत के तकनीकी और वाणिज्यक हितों का पोषण कर रहे हैं। 21वीं सदी में इस विदेश नीति से निश्चय ही भारत अनेक मोर्चों में सफल सिद्ध हो सकेगा।

विशिष्ट वक्ता प्रो. अनिल शिवानी (अधिष्ठाता, वाणिज्य एवं प्रबंधनक संकाय, अ.बि.वा. हिं.वि.वि., भोपाल) ने भारत की विदेश नीति पर विचार व्यक्त करते हुए बताया कि मेक इन इंडिया, स्मार्ट सिटी तथा वाणिज्यिक कारीडोर के लिए श्री मोदी जी के द्वारा देश-विदेश में किए जा रहे प्रयासों से निश्चय ही भारत की अर्थव्यवस्था सुदृढ़ होगी। उन्होंने महर्षि अरविंद की भविष्याणी को उदधृत करते हुए बताया कि महर्षि कहा करते थे कि '2011 के बाद भारत विश्व की प्रमुख शक्तियों में से एक होगा'। श्री मोदी के नेतृत्व में भारत ने उस दिशा में पहल शुरू कर दी है। इसके परिणाम प्रबंधन और वाणिज्यिक के दृष्टिकोण से आने भी शुरू हो गए हैं। भारत आज निवेश के दृष्टिकोण से विदेशी निवेशकों की प्रथम पसंद बनता जा रहा है। श्री मोदी जी ने अभी तक लगभग जिन 30 देशों की यात्राएं की है वहां से निवेश के जो रूझान प्राप्त हो रहे हैं वह निश्चय ही भारत के लिए लाभकारी सिद्ध होंगे और भारत एक आर्थिक दृष्टिकोण से महाशक्ति का स्थान प्राप्त कर सकेगा।

सत्र के मुख्य वक्ता श्री आशुतोष भटनागर (जम्मू कश्मीर अध्ययन केंद्र, नई दिल्ली) ने अपने विचार प्रकट किए। विगत घटनाक्रम को बताते हुए उन्होंने कहा कि ब्रिटिश काल में कश्मीर राज्य देश की एक रियासत थी, जिस पर डोगरा वंश का शासन था। अक्टूबर 1947 में

पाकिस्तानी सेना तथा पाकिस्तान उत्तर पश्चिम सीमांत प्रांत के कबायलियों ने आपस में मिलकर यहां आक्रमण कर दिया। इस वक्त यहां के तत्कालीन महाराजा हरिसिंह ने इन विकट परिस्थितियों का सामना न कर पाने के कारण विलय पत्र पर हस्ताक्षर कर दिए। इसके बाद जम्मू कश्मीर राज्य के प्रतिरक्षा, विदेश, संचार मामलों पर भारत का नियंत्रण हो गया। उन्होंने इस मुद्दे पर पाकिस्तान के साथ हुए युद्धों का भी वर्णन किया। जम्मू कश्मीर को धारा 370 के तहत विशेष दर्जा देने का विरोध करते हुए इसे हटाने पर चर्चा की। वर्तमान में जम्मू और कश्मीर के विकास के लिए भारत को विश्व बैंक और अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष से अनुदानों पर पहल करने की बात की और इस मुद्दे में भारत के सहयोग पर भी उन्होंने जोर दिया। उन्होंने कहा कि भारत में सीमाओं को सुरक्षित करने की प्राचीन परंपरा रही है। बिहार के मगध के सम्राट अशोक ने श्रीनगर में राजधानी बसाई। यह निर्णय उसने सीमाओं को सुरक्षित करने के लिए ही लिया था। 1842 से 1962 तक चीन ने भी मानसरोवर की संधि का उल्लंघन नहीं किया था। यह सब ऐतिहासिक कालक्रम को देखने से स्पष्ट होगा। इतिहास को इस दृष्टि से नहीं देखने के कारण समस्याएं विकराल हुई है। भारतीय राजनय की नीतियों में इन्हें शामिल नहीं करने से हम दुनियां के सामने अपनी विदेशनीति की सांस्कृतिक परंपराओं को प्रभावीढंग से नहीं रख पाए। आजादी के बाद कई दशकों तक भारतीय नेतृत्व में अपनी सांस्कृतिक परंपराओं को लेकर शर्मिंदगी रही। जबकि दुनियां के अधिकांश देश अपने सांस्कृतिक परंपराओं के आधार पर विदेशनीति पर आगे बढ़ते रहे। भारत की पहचान हिंदू की रही है। हम धर्मनिरपेक्षता के तथ्यों को बचाने के लिए इस पहचान को छुपाते रहे। भारतीय जीवन मूल्यों को आधार बनाकर अपनी छवि को स्थापित करने का जो अवसर 1947 के बाद आया था, उसे हमने गवाँया है और जो विचार अधूरे थे, उन्हें अपनाकर भटक गए। वर्तमान और भविष्य के निर्धारण के लिए हमें अपने ऐतिहासिक कार्यक्रम को देखना और अध्ययन करना चाहिए। विजयी भारत के निर्माण हेतु अब हमें उसी दृष्टि से भूमिका बनानी होंगी। 2015 वह चरण है जिसमें आंतरिक बोझ है। एशिया के संदर्भो में देखें तो अमेरिका–चीन की आर्थिक और राजनीतिक संबंधों पर नजर

रखनी होगी। वर्तमान में भारत–चीन की नीति पर भी विचार करना होगा। भविष्य की दृष्टि से देखें तो 25–30 वर्ष बाद भारत युवा होगा जबकि चीन तब तक बूढ़ा हो गया होगा। क्योंकि इस दौरान भारत की युवा शक्ति कुल आबादी का बड़ा हिस्सा होगी और चीन को श्रम शक्ति की आवश्यकता पड़ने वाली है और इसकी पूर्ति भारत ही कर सकेगा। जापान और रूस में भी जनसंख्या घट रही है। वहां पर भी श्रम शक्ति की आवश्यकता भविष्य में होगी। चीन में साम्यवाद के दौर में भी राष्ट्रवाद और पूंजीवाद उभर रहा है। राष्ट्रवाद के बढ़ने से सीमाओं पर समझौता संभव नहीं होता है। इसलिए आने वाले समय में चीन लोकतांत्रिक व्यवस्था का अगर अंग बनता है तो सीमा विवाद का हल निकालना और कठिन हो जाएगा। इसी तरह पश्चिम एशिया में जो घट रहा है उसकी भी तैयारी की समीक्षा करनी होगी। सीरिया–जॉर्डन की समस्या से लोग शरणगाह ढूंढ रहे हैं। अगर इस तरह के हालात हमारे पड़ोसी देश पाकिस्तान में हो और वहां के निहत्थे लोग भारत की सीमा की ओर बढ़ने लगे तो हमारी नीति क्या होगी, इस पर विचार करना चाहिए। क्योंकि कट्टरपंथी पैदा होने से इस्लाम में भी संघर्ष होता है। पाकिस्तान में भी इसका प्रभाव होना संभव है और इससे बिखराव पैदा होगा। इसलिए विदेश नीति पर इस दृष्टिकोण से विमर्श होना चाहिए।

प्रो. सत्यदेव मिश्र (अधिष्ठाता, आधारभूत संकाय, अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल) ने अध्यक्षीय उद्‌बोधन में बताया कि समकालीन विदेश नीति पर विदेशी देशों के साथ विज्ञान एवं तकनीकी के दृष्टिकोण से किए जा रहे प्रयासों की सराहना की और उन्होंने कहा कि मेक इन इंडिया की संकल्पना न केवल भारत में रोजगार के अवसर उपलब्ध कराएगी बल्कि विदेशों में कार्यरत भारत के युवाओं में भी उत्साहवर्द्धन कर सकेगी। विज्ञान और तकनीक के दृष्टिकोण से किए जा रहे समझौतों को उन्होंने देश के लिए लाभकारी बताया तथा मोदी जी के अंतरराष्ट्रीय दौरों में तकनीकी के समाज कल्याणकारी पक्ष की सराहना की । 21वीं सदी की विदेश नीति निश्चय ही भारत और भारत के युवाओं के लिए एक

नई पहल शुरू करने वाली सिद्ध होगी ऐसा उन्होंने विश्वास व्यक्त किया।

संगोष्ठी के द्वितीय सत्र में **'भारतीय विदेश नीति का सांस्कृतिक आधार'** विषय पर **विशिष्ट** वक्तव्य देते हुए श्री **डॉ. अनूप कुमार गुप्ता** (शोधार्थी, झांसी) ने भारतीय विदेश नीति के सांस्कृतिक आधारों पर अपने विचार प्रस्तुत किये। उन्होंने प्राचीन भारत के राजनय के महत्व के बारे में बताया। सांस्कृतिक राजनय अंतरराष्ट्रीय स्तर पर लोगों और राष्ट्रों को जोड़ने का विदेश नीति का सबसे कारगर उपकरण है। अतीत काल से ही संस्कृति और वाणिज्य आपस में जुड़े रहे हैं। ऐसा देखा गया है कि कभी संस्कृति वाणिज्य को बढ़ाती है और कभी वाणिज्य संस्कृति को बढ़ाता है। इस प्रकार सांस्कृतिक संपर्क देशों के मध्य राजनीतिक, आर्थिक और वाणिज्यिक संबंधों को मजबूत करते हैं। स्वतंत्र भारत ने लोगों के मध्य संपर्क प्रगाढ़ करने हेतु प्रारंभ से सांस्कृतिक राजनय को विदेश नीति में प्रमुखता दी थी। इस दिशा में भारत ने 126 देशों के साथ द्विपक्षीय सांस्कृतिक समझौतों पर हस्ताक्षर कर दिए हैं। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वर्ष 1950 में सांस्कृतिक संबंधों की भारतीय परिषद् की स्थापना की गई। वर्तमान वैश्विक दौर में सांस्कृतिक राजनय का प्रकटीकरण आवश्यक है। अतः यहां स्वामी विवेकानंद द्वारा शिकागो में विश्व धर्म सम्मेलन में दिए गए उनके भाषण का मूल तत्व समझना जरूरी है। उन्होंने सभी धर्मों के लिए कहा कि 'स्वीकार्यता हो बहिष्कार नहीं' और 'आपसी समझ हो धर्मांतरण नहीं'। इसके अतिरिक्त डॉ. गुप्ता ने वसुधैव कुटुम्बकम, मानववाद, विश्व शांति और अहिंसा जैसे मूल्यों की विदेश नीति में भूमिका पर जोर दिया और साथ ही भारतीय ग्रंथों में वर्णित सामरिक तत्वों का भी उन्होंने उल्लेख किया। डॉ. गुप्ता ने कहा कि हमारे मूलभूत सांस्कृतिक राजनय पर विमर्श होना आवश्यक है। सांस्कृतिक विरासत में एकात्म मानव की दृष्टि भारत में सदैव रही है। भारत में कभी भी दूसरे की पराधीनता स्वीकार नहीं की।

विदेशी विद्वानों ने भी माना कि भारतीय विदेश नीति तीन स्तरों से होकर गुजरी है। पहला नेहरूवादी विचारधारा, दूसरा नवउदारवादी और तीसरा यथार्थवादी। नेहरूवादी विचार

धारा से आप सब परिचित है, लेकिन नेहरूवादी विचार-धारा इंदिरा के समय तक मेलिटेंट नेहरूइज्म के रूप में अधिक दिखाई देती है। दूसरे स्तर पर नवउदारवादी व्यवस्था में आर्थिक तत्वों पर ध्यान दिया गया। लेकिन तीसरे स्तर पर आते-आते यथार्थवादी व्यवस्था में सामरिक क्षमता का विस्तार किया। चिंता की बात यह है कि स्वतंत्रता के पूर्व पांच हजार वर्ष में हम क्या सोचते थे, विदेश नीति को लेकर उसको भारतीय राजनय में स्थान नहीं मिला। जबकि ढाई हजार वर्ष पूर्व के विद्वान चाणक्य ने राजनैतिक दर्शन पर विवेकपूर्ण व्यवस्था की रचना की है। उन्होंने पूर्ववर्तियों को अपने विचार-विस्तार का आधार माना। चाणक्य के दर्शन में भारतीय परंपरा का प्रभाव है। सामरिक संस्कृति का व्यवहार रामायण में भी दिखाई देता है। राम और रावण में सामरिक संस्कृति विद्यमान थी। सोच और व्यवहार में रावण रक्ष संस्कृति की स्थापना करना चाहता था। वह संनातन पद्धति के आधार पर मानव मूल्यों, गरिमा को कोई स्थान नहीं देना चाहता था। अपहरण उसकी परंपरा थी और बल के आधार पर साम्राज्य स्थापित करने की मंशा थी, लेकिन दूसरी ओर राम की रणनीति यक्ष संस्कृति की थी। भारत का नजरिया राम की सामरिक संस्कृति ही रही है। यानि, आदर्शवादी और वास्तविक रणनीति। रामराज्य का आशय लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना से है, जिसमें लोगों को कोई कष्ट नहीं हो। क्षमता के अनुसार काम लिया जाए और आवश्यकता के आधार पर संसाधनों का वितरण किया जाए। यह कार्य राम ने सबसे पहले किया। इसका मूल एकात्मवाद ही है। सामान्यतः भारत में समग्रता से लिखने की परंपरा रही है, लेकिन पश्चिम में खंड-खंड लिखने की परंपरा रही है। इसी आधार पर पश्चिम के विद्वानों ने कहा कि आजादी के पूर्व भारत की कोई सामरिक रणनीति नहीं रही। राम ने भी सामरिक नियोजन किया था। विभीषण एवं सुग्रीव को साथ लेना उसी का अंग था। हितों की परस्परिकता संबंधों के लिए अनिवार्य है। हितों कि परस्परिकता टकराव और मित्रता का आधार होती है और ये स्थाई नहीं होती। राम ने भी मित्रता का संजाल बनाया था। वास्तव में विदेश नीति आंतरिकता का विस्तार है। इसलिए भारत के प्राचीन ग्रंथों को भी सामरिक चिंतन में शामिल किया जाना जरूरी है। उन्हें केवल धार्मिक ग्रंथ कहकर खारिज किया जाना ठीक नहीं है।

विशिष्ट वक्ता डॉ. आभा पांडे (एम.बी.एम. विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल) ने अपने विचारों को व्यक्त करते हुए कहा कि वर्तमान विदेश नीति के परिप्रेक्ष्य में भारत की परंपरागत एवं आधुनिक जो कि प्रौद्योगिकी के दृष्टिकोण से अनुसंधान करने वाली संस्थाओं का यूरोप और अमेरिका की उच्च अनुसंधान संस्थाओं के साथ समझौते करने के बाद और अधिक महत्वपूर्ण भूमिका निर्वहन कर सकेगी। भारत के प्रति विश्व के अनुसंधानकर्ताओं का आकर्षण इस बात का प्रतीक है।

द्वितीय सत्र के मुख्य वक्ता श्री प्रफुल्ल केतकर (संपादक ऑर्गनाइजर, नई दिल्ली) ने भी भारतीय विदेश नीति के समकालीन मुद्दों पर अपने विचार प्रस्तुत किये। उन्होंने विदेश नीति के वैज्ञानिक आयाम पर अब्दुल कलाम आजाद के विचारों का प्रभाव बताया। उन्होंने भारत की विदेश नीति के भू-राजनीतिक एवं भू-आर्थिक कारकों का वर्णन किया। भारत की भू-राजनीतिक एवं भू-आर्थिक स्थिति में ना केवल उसकी विदेश नीति के निर्धारण में बल्कि इस क्षेत्र में उसकी सुदृढ़ स्थिति की स्थापना में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इसलिए भारत की भू-राजनीतिक अवस्थिति वर्तमान में विदेश नीति की प्रमुख विशेषता बन गई है। भू-राजनीतिक तत्वों के अंतर्गत इसकी भौगोलिक अवस्थिति, हिमालय पर्वत, हिन्द महासागर, वृहत आकार और विशाल आबादी, प्राकृतिक एवं मानव निर्मित सीमायें आदि ने इस क्षेत्र में भारत की महत्वपूर्ण भूमिका को सुनिश्चित किया है। भारत की भौगोलिक अवस्थिति ऐसी है कि चीन, दक्षिण पूर्व एशिया, दक्षिण एशिया, पश्चिम एवं पूर्वी अफ्रीका के साथ इसका अभिन्न जुड़ाव है। भू-आर्थिक तत्वों के अंतर्गत भारत के आर्थिक विकास की आवश्यकता, आर्थिक सहायता की आवश्यकता, विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास की आवश्यकता, प्राकृतिक संसाधनों की प्रचुरता एवं उनका सफल एवं विकासात्मक प्रयोग, उसके बढ़ते हुए बाजार एवं भारत की अर्थव्यवस्था की प्रबल संभावनाओं आदि बातों ने भी भारतीय विदेश नीति के भू-आर्थिक स्वरूप का निर्धारण किया है। अतः यह स्पष्ट है कि भारत की विदेश नीति के प्रमुख लक्षण के रूप में उसके भू-राजनीतिक

और भू-आर्थिक तत्वों ने सॉर्क, आसियान और चीन के साथ उसके संबंधों की दिशा एवं रूपरेखा तय की है। उनका मानना था कि इस संगोष्ठी में चुनौतियों के स्थान पर समाधान कारक को शीर्षक में शामिल किया जाना चाहिए। विदेश नीति की चर्चा दिल्ली केन्द्रित से आगे स्थानीय स्तर पर आनी चाहिए। अभी विदेश नीति में कई ऐसे छुपे हुए पहलू है जिन पर शोध करने की सख्त आवश्यकता है। चीन का सांस्कृतिक प्रभाव दक्षिणी पूर्वी एशियाई देशों में बढ़ रहा है इसे रोकने के लिए भारत को प्रयास करने की जरूरत है।

सत्र की अध्यक्षता कर रहीं प्रो. नीरजा अरूण (निदेशक, भारतपारीय भारत अध्ययन केंद्र, अहमदाबाद विश्वविद्यालय, गुजरात) ने भी विदेश नीति पर अपने विचार रखे। उन्होंने प्रवासी भारतियों का विदेश नीति में योगदान का वर्णन किया। ब्रिटिश शासन से मुक्ति के लिए भारत की स्वाधीनता की लड़ाई में भारतीय प्रवासियों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। भारतीय प्रवासियों द्वारा भारत की राजव्यवस्था में सहभागी बनकर तथा अपनी मातृभूमि में निवेश एवं तकनीकी प्रसार के द्वारा वे देश को सशक्त बना सकते हैं। भारतीय सरकार ने भारतीय प्रवासियों से संबंधित अलग से एक समुद्रपार भारतीय कार्य मंत्रालय का गठन किया है। यह मंत्रालय प्रत्येक वर्ष उनसे संबंधित मामलों पर चर्चा करने के लिए प्रवासी भारतीय दिवस मनाता है। प्रवासी भारतीयों द्वारा प्रेषित व्यापक धनराशि कुशल एवं अकुशल श्रमिकों की आर्थिक रूप से सुविधाहीन श्रेणी से आती है न कि संपन्न वर्गो से। यह प्रवासी श्रमिक मौसमी श्रम पर जीविका चलाते हैं एवं भारत के साथ भावनात्मक एवं सांस्कृतिक रूप से जुड़े रहने की चेष्टा करते हैं। भारतीय प्रवासियों का योगदान भारत में प्रतिवर्ष प्रेषित धनराशि और प्रत्यक्ष निवेश के रूप में प्राप्त होता है। विश्व राजनीति में भारत की विदेश नीति का काफी व्यापक असर हैं अतः प्रवासी भारतीयों के कारण आने वाले समय में अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अंतर्गत इसके लिए व्यापक संभावनाएं है। इसके साथ ही उन्होंने वसुधैव कुटुम्बकम की अवधारणा को विदेश नीति का मुख्य आधार बताते हुए उन्होंने विश्व शांति की संकल्पना को

प्रस्तुत किया।उन्होंने कहा कि देश के बाहर जाकर भारतीय नागरिकों ने उपलब्धियां पाई है। लेकिन उनको अपने मूल से जोड़ने के लिए प्रभावी प्रयास कई दशकों तक नहीं किए गए, जिससे वह अपने आपको भारत से जोड़ नहीं पाए। लेकिन पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने पहल कर प्रवासी भारतियों की समस्याओं के निदान और उन्हें भारत के साथ जुड़े रहने का सफल प्रयास किया। इसी को वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी और अधिक विस्तारित करने का कार्य कर रहे हैं।

संगोष्ठी के समापन सत्र के विशिष्ट वक्ता डॉ. अरविंद बोहरे (शासकीय उत्कृष्टता कन्या महाविद्यालय, सागर) ने अपने विचारों के माध्यम से भारत की विदेश नीति पर प्रकाश डालते हुए बताया कि समकालीन सरकार इस दिशा में जो प्रयास कर रही है वह न केवल भारत के लिए बल्कि उन प्रयासों से वे देश भी लाभांवित होंगे, जिन देशों की मोदी जी यात्रा कर रहे हैं। भारत की विदेश नीति के दृष्टिकोण से यदि हम व्यक्तित्वों का मूल्यांकन करें तो विगत 67 वर्षो में चार व्यक्तित्व ही दृष्टिगोचर होते हैं। 1. श्री पंडित नेहरू 2. श्रीमती इंदिरा गांधी 3. श्री अटल बिहारी वाजपेयी 4. वर्तमान प्रधानमंत्री श्री मोदी जी। इन व्यक्तित्वों के दूरदर्शी प्रयासों को आगे बढ़ाने में भारत के राष्ट्रीय चरित्र के माध्यम से श्री मोदी जी महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाहण कर रहे हैं। इनके प्रयासों से भारत की विदेश नीति एक नए सोपान को प्राप्त कर सकेगी इसमें संशय नहीं हैं।

संगोष्ठी के संयोजक डॉ. पवन कुमार शर्मा (आचार्य एवं अध्यक्ष राजनीति शास्त्र एवं लोक प्रशासन विभाग, अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल) ने मोदी सरकार की विदेश नीति को कौटिल्य के मंडल सिद्धांत से अनुप्रमाणित बताया। उन्होंने कहा कि कौटिल्य जिस प्रकार से मंडल सिद्धांत में राजा को बिजीगिषु की श्रेणी में रखता है और उसके इर्द-गिर्द उसके मित्र-शत्रु और शत्रु-मित्र और मित्र-मित्रों का संजाल बनाता है तथा इसमें उनकी

प्रकृतियों को संयोजन करता है। इस प्रकार से कुल मिलाकर यह 18 राज्य होते हैं (12 राज्य मंडल के एवं 6 इनकी प्रकृति) कुल मिलाकर 18। कौटिल्य इस प्रकार के चार मंडलों का उल्लेख करते हैं जो कि कुल मिलाकर 72 राज्य होते, जो कि वृहर राज्य मंडल के रूप में जाना जाता है। यदि हम मोदी सरकार की विदेश नीति का गंभीरता से अध्ययन करें तो हमारे ध्यान में आता है कि उन्होंने मंडल सिद्धांत को पहली बार भारत की विदेश नीति का आधार बनाने की कोशिश की है। उदाहरण स्वरूप वे चीन की भी यात्रा करते है, जापान भी जाते हैं, मंगोलिया भी जाते हैं, कोरिया भी जाते हैं, अमेरिका भी जाते हैं और पाकिस्तान को छोड़कर सॉर्क के सभी देशों की यात्रा भी लगभग कर चुके हैं। इस प्रकार से वे न केवल पड़ोसी राज्यों के साथ संबंध मधुर बनाने पर सक्रिय है, वहीं सुदुर बैठी हुई महाशक्तियों के साथ भी प्रगाढ़ता स्थापित करके भारत के राष्ट्रीय हितों का पोषण करने की दिशा में सक्रिय हैं। पहली बार भारत के स्वाभिमान के दृष्टिकोण से भारत की विदेश नीति को नियंत्रित करने का प्रयास किया है। वे कहते भी हैं कि हमें अपने मित्रों से बातचीत करने में नजरे झुकाकर बात नहीं 'नजरें मिलाते हुए बात करनी चाहिए'। यह मात्र जुमला नहीं है, बल्कि भारत की विदेश नीति की वास्तविकता है। निश्चय ही ऐसी सुदृढ़ विदेश नीति के आधार पर भारत अपने खोए हुए वैभव को प्राप्त कर सकेगा। क्योंकि पहली बार भारत की विदेश नीति का निर्धारिण पश्चिमी मापदंडों से इतर भारतीय चिंतन के आधार पर स्थापित करने की प्रक्रिया शुरू की गई है।

समापन सत्र के मुख्य वक्ता प्रो. संजीव कुमार शर्मा (राष्ट्रीय महामंत्री, भारतीय राजनीति विज्ञान परिषद् एवं आचार्य राजनीति शास्त्र एवं लोक प्रशासन विभाग, चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ) ने अपने समापन भाषण में भारत की विदेश नीति की एतिहासिक पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालते हुए कहा कि यद्यपि भारत की विदेश नीति की संरचना पश्चिमी विचारों के प्रभावों के चलते प्रारंभ हुई थी, किंतु बीच-बीच में उसमें राष्ट्रीय तत्वों का समावेश होता रहा, जिसके चलते भारत को विश्व में जो स्थान मिलना चाहिए था वह तो नहीं मिला

फिर भी एक सम्मानजनक अवस्था भारत ने प्राप्त की, यह भारत की विदेश नीति की संतुलित अवस्था है। यद्यपि भारत चाहता तो विदेश नीति को स्थिर करके एक उन्नत व्यवस्था को प्राप्त हो सकता था, किंतु तत्कालीन परिस्थितियों को देखते हुए यह संभव न हो सका। उन्होंने आगे कहा कि इस सब के लिए भारत की आंतरिक नीतियां भी जिम्मेदार रही है। इज्राइल के उदाहरण से उन्होंने इस विषय को समझाने की कोशिश की। प्रो. शर्मा का मानना था कि इज्राइल के साथ संबंधों की स्थापना 60 के दशक में ही हो गई होती तो आज बहुत सारी जटिल समस्याओं का सामना भारत आसानी से कर सकता था। लेकिन मोदी सरकार ने इस दिशा में एक सकारात्मक पहल के माध्यम से विदेश नीति को स्थायित्व देने की कोशिश की है, इससे निश्चय ही भारत के न केवल राष्ट्रीय हित सधेंगे, बल्कि भारत भविष्य में एक सम्मानजनक अवस्था को भी प्राप्त कर पाएगा, जिसको उसे बहुत पहले प्राप्त कर लेना था। विश्व मामलों की भारतीय परिषद् की यह एक सकारात्मक पहल है कि उसने भारत की विदेश नीति पर चर्चा हेतु भारत के छोटे-छोटे महानगरों में संगोष्ठी स्थानीय भाषाओं में संचालित करने की प्रक्रिया को प्रारंभ किया है। उसकी इस पहल से इन नगरों के विद्यार्थी, अध्येयता एवं शिक्षक आदि भी भारत की विदेश नीति की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं समकालीन अवस्था से परिचित हो सकेंगे।

समापन सत्र की अध्यक्षता कर रहे प्रो.सी.एस. मिश्रा (निवर्तमान अधिष्ठाता, विधि संकाय बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल) ने अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में भारत की समकालीन विदेश नीति की समस्याओं पर प्रकाश डालते हुए बताया कि इसके ऊपर अतीत की छाप स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है, क्योंकि जिन नेताओं ने देश के स्वतंत्रता आंदोलन की अगवाई की थी वे सभी या तो पश्चिम से शिक्षा प्राप्त करके लौटे थे या फिर भारत में ही अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करके अंग्रेजी व्यवस्था के हित पोषण में लगे हुए थे। इसलिए इन लोगों से स्वतंत्रता के बाद भी भारत के हित पोषण की अपेक्षा करना हास्यास्पद था। 1978 में पहली बार जनता पार्टी सरकार ने विदेश मंत्री के रूप में कार्य करने वाले अटल बिहारी वाजपेयी ने

पड़ोसी देशों के साथ संबंध सुधारने पर बल दिया। वर्तमान प्रधानमंत्री श्री मोदी के नेतृत्व में भारत की विदेश नीति पड़ोसी देशों के संबंध सुधारने पर बल दे रही है, यह एक अच्छी पहल है। इसके दूरगामी परिणाम भारत की विदेश नीति की समस्याओं को हल करने में लाभकारी रहेंगे।

संगोष्ठी के समापन के अंत में प्रो. अनिल शिवानी (अधिष्ठाता, वाणिज्य एवं प्रबंधन संकाय तथा अधिष्ठाता छात्र कल्याण, अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल) ने अतिथियों एवं सहयोगी संस्थाओं तथा उपस्थित सभी शिक्षकों, विद्यार्थियों के प्रति आभार एवं धन्यवाद ज्ञापित करते हुए उन्होंने विश्वविद्यालय के कुलपति तथा कुलसचिव को भी संगोष्ठी हेतु समस्त सुविधाएं उपलब्ध करने हेतु आभार व्यक्त किया। यद्यपि माननीय कुलपति जी तथा कुलसचिव जी अन्यत्र व्यस्तताओं के कारण संगोष्ठी में सहभागिता नहीं कर सके थे। प्रो. शिवानी ने आर्थिक अनुदान के लिए विश्व मामलों की भारतीय परिषद् को भी धन्यवाद दिया तथा वे विद्वान जो कि वक्ताओं के रूप में उपस्थित रहे, उनका भी विश्वविद्यालय एवं संगोष्ठी के सहभागियों की ओर से धन्यवाद ज्ञापित किया।

इस एक दिवसीय संगोष्ठी के समस्त सत्रों का संचालन डॉ. भावना यादव, शासकीय उत्कृष्टता कन्या महाविद्यालय, सागर एवं डॉ. रहिम चतुर्वेदी सहायक आचार्य शिक्षा विभाग अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल द्वारा किया गया। अंत में राष्ट्रगान के साथ संगोष्ठी का समापन हुआ।

इस एक दिवसीय संगोष्ठी में कुल चार सत्र हुए, जिनमें से एक उद्घाटन सत्र, एक समापन सत्र एवं दो समग्र सत्रों का संचालन किया गया। प्रति सत्र में एक अध्यक्ष, एक मुख्य वक्ता एवं दो विशिष्ट वक्ताओं का उद्बोधन हुआ तथा उद्बोधन पश्चात प्रश्न-उत्तर का भी

सत्र रखा गया। संगोष्ठी में कुल सहभागियों की संख्या लगभग 70 थी एवं लगभग 200 विद्यार्थियों ने भी इस संगोष्ठी में भाग लिया।

***

प्रो. पवन कुमार शर्मा
संयोजक (राष्ट्रीय संगोष्ठी) एवं
विभागाध्यक्ष, राजनीति शास्त्र
अ.बि.वा.हिं.वि.वि., भोपाल